NEERAJ®

Serving Education for Last 40 Years

M.H.D. -23

मध्यकालीन कविता–I

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Dr. Rajesh Kumar*

NEERAJ
PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 300/-

Content

मध्यकालीन कविता-I

Question Paper—June-2023 (Solved) 1-2
Question Paper—December-2022 (Solved) 1-2
Question Paper—Exam Held in July-2022 (Solved) 1-2
Question Paper—Exam Held in March-2022 (Solved) 1-2
Question Paper—Exam Held in August-2021 (Solved) 1-2
Question Paper—Exam Held in February-2021 (Solved) 1-2

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

मध्ययुगीनता एवं भक्तिकाल

1. मध्ययुगीनता की अवधारणा : भक्तिकाल के संदर्भ में परिचय 1
2. भक्तिकाव्य संबंधी विविध दृष्टिकोण 12
3. भक्ति काव्य की पारिभाषिक शब्दावली 21

मुल्ला दाऊद एवं रविदास

4. सूफी काव्य परंपरा और मुल्ला दाऊद 34
5. 'चंदायन' की कथावस्तु और भावाभिव्यक्ति 43
6. 'चंदायन' का भाषा-शिल्प 53
7. निर्गुण काव्य परंपरा और रविदास 62

8. रविदास की भक्ति और सामाजिक चेतना 74

9.रविदास की काव्य-भाषा और शिल्प 86

सूरदास

10. कृष्ण काव्य परंपरा और सूरदास 94

11. सूरदास के काव्य की अंतर्वस्तु 107

12. सूरदास की काव्यभाषा और शिल्प 120

रसखान

13. कृष्ण भक्त कवि तथा रसखान 128

14. रसखान की कविता में प्रेम और भक्ति 138

15. रसखान की काव्य कला 147

■■

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2023

(Solved)

मध्यकालीन कविता-I

M.H.D.-23

समय : 2 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 50*

नोट: *प्रथम प्रश्न अनिवार्य है। शेष में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए।*

प्रश्न 1. निम्नलिखित पद्यांशों में से किन्ही दो की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए–

(क) लगु जैस इह अहि बुतकारी। चन्दन
जैफर मिरै सँवारी॥
सरग पवान लाग जनु आयी। चाहत
बैंसौं जाइ उड़ायी॥
बाँसपोर हुत जनु घर काँढ़ी। अछरि जइस
देखि मैं ठाढ़ी॥
कोइ पुहुप अस अंग गँधाई। रितु बसन्त
चहुँ दिसि फिर आई॥
अंग बास नौखण्ड गँधाने। बास
केतकी भँवर लुभाने॥
उपेन्दर गोयन्द चँदरावल, बरभाँ बिसुन मुरारि॥
गुन गँधरव रिखि देवता, रूप विमोह नारि॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत पद्यांश मुल्ला दाऊद की रचना 'चंदायन' से उद्धृत है। इन पंक्तियों में राजा रूपचंद बागिर साधु से चाँदा के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनकर उसके प्रति आसक्त हो जाता है।

व्याख्या–चाँदा को देखकर आश्चर्य होता है कि क्या कोई स्त्री इतनी सुंदर भी हो सकती है। उसे देखकर ऐसा लगता है मानो स्वर्ग की अप्सरा धरती पर अवतरित हो गई है। जैसे-जैसे वह बड़ी होती जा रही है, वैसे-वैसे उसके रूप सौंदर्य की सुगंध चारों ओर फैल रही है। ऐसा लगता है मानो फिर से वसंत ऋतु आ गई है, जिसमें पुष्प सारे जग को अपनी सुगंध से सुवासित कर रहे हैं। हर उसका अंग-अंग सौंदर्य से भरपूर है, जो केतकी के समान सबको लुभाता है। चांदा के ऐसे रूप का वर्णन सुनकर तो देवता भी उसके मोह से दूर नहीं रह पाते।

विशेष–1. अवधी भाषा है।
2. उपमा एवं उत्प्रेक्षा अलंकार है।
3. शृंगार रस की अभिव्यक्ति है।

(ख) एकै माटी के सभ भाँडे, सभ का एकौ
सिरजनहारा।
रैदास व्यापै एकौ घट भीतर, सम को एकै घड़ै
कुम्हारा॥

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत दोहा संतकवि रैदास द्वारा रचित है। रैदास ने यहां सभी प्राणियों में एक समान होने के भाव को अभिव्यक्त किया है।

व्याख्या–रैदास कहते हैं कि सभी एक ही माँटी के भांडे हैं अर्थात सभी प्राणी एक ही प्रकार की जीवात्मा से बने हैं, सभी को बनाने वाला वह परमात्मा है। सभी के भीतर एक समान प्राण है, सभी को बनाने वाला एक ही कुम्हार अर्थात ईश्वर है।

विशेष–1. दोहा छंद है।
2. जाति-पांति, ऊँच-नीच के भेदभाव पर व्यंग्य किया है।
3. देशज शब्दों का प्रयोग है।

(ग) मैं दुहिहौं मोहिं दुहन सिखावहु।
कैसे गहत दोहनी घुटुवनि, कैसे
बछरा थन लै लावहु।
कैसैं लै नोई पग बाँधत, कैसें लै गैया अटकावहु।
कैसे धार दूध की बाजति, सोइ सोइ विधि
तुम मोहिं बतावहु।
निपट भई अब साँझ कन्हैया, गैयनि पै
कहुँ चोट लगावहु।
सूर स्याम सौ कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहि
उठि आवहु॥

संदर्भ–प्रस्तुत पद सूरदास के कृष्ण के बाल-लीला के पदों से उद्धृत है। सूरदास ने कृष्ण की बाल-लीला के वर्णन में वात्सल्य का अत्यंत मनोहारी चित्रण किया है। कान्हा हठ कर रहे हैं कि मुझे भी गाय का दूध दुहना सीखना है। सांझ का समय तो ग्वाल बाल कान्हा को समझा रहे हैं। इसी मनोहारी दृश्य का वर्णन इन पंक्तियों में कवि ने किया है।

व्याख्या–कृष्ण कह रहे हैं कि मुझे भी दूध दुहना सिखाओं कि कैसे दोनों घुटनों पर बैठा जाता है। बछड़ा किस प्रकार थन को मुंह लगाता है। किस प्रकार दूध दुहने के लिए गाय के पैरों

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

को बाँधा जाता है और किस प्रकार गैया को रोका जाता है, ताकि दूध दुहा जा सके। दूध की धार गाय के थने से किस प्रकार निकलती है, यह सब विधि तुम मुझे समझाओ। किंतु सभी ग्वाल बाल कहते हैं कि कान्हा अब तो बहुत सांझ हो चुकी है, गाय को चोट पहुंचाना ठीक नहीं है। हम सब सुबह दूध दुहने आएंगे और तुम्हें सिखाएंगे।

विशेष–1. बाल-लीला का मनोहारी चित्रण है।

2. ब्रज भाषा है।

3. अनुप्रास अलंकार की छटा है।

(घ) छीर जो चाहत चीर गहैं ए जू लेहु न
केतक छीर अचैहौ।
चखन के मिस माखन माँगत खाहु न माखन
केतिक खैहौं।
जनत हौं जिय की रसखानि सु काहे को
एतिक बात बढ़ैहौ।
गोरस के मिस जो रस चाहत सो रस
कान्ह जू नेकु न पैहौ॥

संदर्भ–प्रस्तुत सवैया रसखान रचित 'सुजान-रसखान' से लिया गया है। रसखान ने कृष्ण की बाल-लीलाओं का वर्णन करते हुए कृष्ण द्वारा माखन खाने के लिए किए जाने वाले क्रिया-व्यापार का वर्णन किया है।

व्याख्या–रसखान कह रहे हैं कि कृष्ण की खीर खाने की इच्छा है, परंतु कह रहे हैं कि खीर नहीं भाती। कृष्ण माखन-खाते हुए भी कह रहे हैं कि मैंने तो केवल चखने के लिए माखन-मांगा है, किंतु मैंने माखन बिलकुल नहीं खाया। रसखान कह रहे हैं कि हृदय में सब जानते हैं, तो इतनी-सी बात को बढ़ाना क्यों? गोरस अर्थात दूध के स्वाद की इच्छा होते हुए कान्हा मन के भाव व्यक्त नहीं कर रहे हैं।

विशेष–1. सवैया छंद है।

2. ब्रज भाषा है।

3. वात्सल्य रस की छटा है।

4. कृष्ण की बाल-लीला का मनोहारी वर्णन है।

प्रश्न 2. मध्ययुगीनता की अवधारणा का विस्तृत विवेचन कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-1, पृष्ठ-3, प्रश्न-1

प्रश्न 3. सगुण काव्यधारा के पांच विशिष्ट पारिभाषिक शब्दों का परिचय दीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-3, पृष्ठ-24, 'सगुण काव्यधारा के प्रमुख पारिभाषिक शब्द'

प्रश्न 4. रविदास की सामाजिक चेतना की चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-8, पृष्ठ-77, 'रविदास की सामाजिक चेतना'

प्रश्न 5. रसखान की कविता में अभिव्यक्त 'प्रेम' का सोदाहरण परिचय दीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-14, पृष्ठ-139, 'रसखान के काव्य में प्रेम'

प्रश्न 6. निम्नलिखित विषयों में से किन्हीं दो पर टिप्पणियां लिखिए–

(क) 'चंदायन' में प्रेम का स्वरूप

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-5, पृष्ठ-43, 'चंदायन की प्रेम पद्धति'

(ख) परमानंद दास का साहित्यिक परिचय

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-10, पृष्ठ-96, 'परमानंददास'

(ग) सहज-शून्य की अवधारणा

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-3, पृष्ठ-22, 'सहज-शून्य'

(घ) सूरदास की नई उद्भावनाएं

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-11, पृष्ठ-115, प्रश्न-4

■■

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

मध्यकालीन कविता-I

मध्ययुगीनता एवं भक्तिकाल

मध्ययुगीनता की अवधारणा : भक्तिकाल के संदर्भ में परिचय

1

परिचय

काल अनंत है और निरंतर है। इस निरंतर प्रवाहमान काल को समझने के लिए इसके खंड करने की जरूरत पड़ती है। प्रकृति ने काल के विभाजन का आधार दिया है। इसे पशु, पक्षी, मनुष्य सभी जीवधारी सहज रूप से समझ जाते हैं, किंतु इतिहास की यह चेतना मानवीय चेतना का हिस्सा है।

काल का प्राथमिक विभाजन अतीत और सतत वर्तमान के बीच में हुआ। यह चेतना सबसे पहले विकसित हुई। उसके बाद व्यवस्थित रूप से जब काल का विभाजन हुआ, मध्यकाल की दृष्टि से इसे प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिककाल कह सकते हैं। मध्यकाल की धारणा आधुनिक काल के अस्तित्व में आने के बाद सामने आई। आधुनिक काल के बाद विचारकों की समझ में आया कि अतीत के दो भाग हैं–एक प्राचीनकाल और दूसरा मध्यकाल। वर्तमान काल आधुनिक काल है, जो इन पूर्ववर्ती दोनों कालों से भिन्न है।

प्राचीन भारतीय दर्शन में मध्यकाल की कोई अवधारणा नहीं थी। यह अवधारणा पश्चिम से आई है, जिसका एक निश्चित अर्थ और संदर्भ है। भारतीय चिंतन में सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग ही मान्य हैं। इन कालों को भारतीय चिंतक पतनोन्मुख कालों के रूप में देखते हैं। काल की यह चक्राकार धारणा है, कलियुग के समाप्त होने के बाद पुनः सतयुग का आगमन होगा, ऐसा विश्वास किया जाता है।

जहाँ तक यूरोपीय इतिहास का प्रश्न है, यूरोपीय इतिहास में मध्यकाल का समय रोमन साम्राज्य के पतन (सन् 476 ई.) से कुस्तुनतुनिया पर तुर्कों के अधिकार (सन् 1453 ई. तक) तक का काल है।

भारतीय इतिहास में प्राचीन काल में हिंदू राजाओं का शासन था। मध्यकाल में मुस्लिम शासकों का साम्राज्य था और आधुनिक काल के प्रारंभिक वर्षों में अंग्रेजों का राज था। अतः कुछ लोग इसे हिंदू राज, मुस्लिम शासन और ईसाई शासन के रूप में भी देखते हैं। इस प्रकार भारतीय इतिहास की व्याख्या भी यूरोपीय व्याख्या के अनुरूप होने लगी। यूरोप में प्राचीन युग यूनानी रोमन साम्राज्य का था, बाद में मध्यकाल अंधकार युग कहलाया।

मार्क्सवादी चिंतकों ने भी इतिहास का विभाजन किया है। मार्क्स के अनुसार सबसे पहले आदिम साम्यवाद, तत्पश्चात सामंतवाद, सामंतवाद के पतन के बाद पूँजीवाद, तत्पश्चात समाजवाद और अंततः साम्यवाद, जिसमें वर्गविहीन और राज्यविहीन समाज स्थापित हो जाएगा। मध्यकाल की दृष्टि से मार्क्सवाद में सामंतवाद का समय मध्ययुग का समय माना जाएगा तथा आधुनिकता का काल पूँजीवाद का काल है। इस पूँजीवाद का भी विकसित रूप साम्राज्यवाद है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार हिंदी साहित्य भारतीय इतिहास के मध्ययुग से प्रारंभ होता है और वह भी लगभग उत्तर मध्ययुगीन काल से हिंदी साहित्य के इतिहास का आदिकाल भी भारतीय इतिहास के मध्यकाल का ही हिस्सा है। चौदहवीं से अठारहवीं शताब्दी के मध्य भक्तिकाल ठहरता है। सूरदास, कबीरदास, तुलसीदास, मीरा और जायसी जैसे कवि भक्तिकाल में हुए।

अध्याय का विहंगावलोकन

मध्ययुगीनता की अवधारणा

मध्ययुग और मध्ययुगीनता दो भिन्न धारणाएं हैं। मध्ययुग कालवाचक है और मध्ययुगीनता एक मनोवृत्ति और विचार दृष्टि है। कुछ विचारकों का मत है कि मध्ययुग का अर्थ आधुनिक काल से पहले का और प्राचीन काल के बाद का काल है। मध्यकालीनता बोध का स्वरूप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने विस्तार से स्पष्ट किया है। उनके अनुसार 'मध्ययुग' या 'मध्यकाल' शब्द भारतीय भाषाओं में नया ही है। आजकल इस शब्द का प्रयोग एक ऐसे काल के अर्थ में होने लगा है, जिसमें सामूहिक रूप से मनुष्य एक स्तब्ध मनोवृत्ति का शिकार हो जाता है।

उन्होंने विस्तार से प्राचीन दार्शनिक ग्रंथों का अध्ययन करके इस 'स्तब्ध' और जब दी हुई मनोवृत्ति का विश्लेषण किया है। प्राचीनकाल के विचारक मानते थे कि वे कुछ 'नया' कह रहे हैं।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

पुनर्जागरण काल के विचारक मानते थे कि अरस्तू बहुत महान थे। उन्होंने कई मौलिक बातें कही थीं, परंतु यह तर्क पर्याप्त नहीं है कि अरस्तू ने ऐसा कहा था। अर्थात भारतीय, यूरोपीय, मध्ययुग के चिंतक, विचारक और लेखक आदि सभी मानते थे कि सारा ज्ञान, सारी बातें अतीत में कही जा चुकी हैं। अब हम कुछ भी नया कहने की स्थिति में नहीं हैं। हम सिर्फ प्राचीन ग्रंथों का अर्थ कर सकते हैं। उन्हें समझ और समझा सकते हैं।

तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' की रचना की। यह उनकी मौलिक रचना है, लेकिन तुलसीदास कहते हैं कि नाना पुराण निगमागमों में जो बातें कही हुई हैं, वे उनकी ही रचना कर रहे हैं। यहाँ तक कि कबीरदास भी अपनी आँखों देखी का ही वर्णन कर रहे हैं अर्थात जो बातें जगत में हैं, उन्हीं बातों को कह रहे हैं। यह दृष्टिकोण इन दोनों कवियों को मध्ययुगीनता बोध के भीतर ही रखती है।

आधुनिकता और मध्ययुगीनता की तुलना करने पर सप्रश्न दृष्टि आधुनिकता है आधुनिकता सारे मान्य सिद्धांतों, आप्त वचनों शास्त्रों और विचारों पर संदेह करते हुए उन्हें प्रश्नसूचक दृष्टि से देखती है, जबकि मध्ययुगीनता आप्तवचनों पर विश्वास करती है अर्थात शास्त्रों में जो कहा गया है, वे ऋषिवचन सत्य हैं। मध्यकाल का कवि जब प्रश्न करता है, तब हम उस कवि को आधुनिक कहने लगते हैं। कई बार कबीर हमें आधुनिक लगते हैं।

प्राचीन काल से भारतीय दर्शन और चिंतन में कर्मफल और पुनर्जन्म की धारणा पद सहमति है। पुनर्जन्म की इस धारणा के साथ मध्ययुग में 84 लाख योनियों में से मानव श्रेष्ठ है, की मान्यता भी बनी हुई थी। इस नर-देह में ही वह पुण्य कर सकता है। भगवान की भक्ति कर सकता है और अपनी मुक्ति के उपाय कर सकता है।

चिंतन के स्तर के साथ मध्यकालीन जीवन स्तर सामाजिक जीवन से भी जुड़ा था। वर्णाश्रम व्यवस्था ठीक-ठीक कब प्रारंभ हो गई थी, इसकी प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नहीं है। इसी वर्ण-व्यवस्था के भीतर से जाति प्रथा विकसित होती गई। चार वर्ण हैं–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इसी तरह सौ वर्ष के जीवन की कल्पना करते हुए चार आश्रम भी नियत कर लिए गए थे–ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और संन्यास आश्रम। वर्णाश्रम और जाति प्रथा के दो सिद्धांत मान्य हो चुके थे कि कोई व्यक्ति सिर्फ अपनी जाति में ही विवाह कर सकता था और दूसरी जाति में विवाह होने पर संतान उत्पन्न हो जाने पर उसे जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता था। कालांतर में उसकी नई जाति बन जाती थी। वर्ण और जाति संबंधी ये मान्यताएँ मध्यकाल में स्वीकृत थीं। वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार कोई व्यक्ति अपने व्यवसाय में परिवर्तन नहीं कर सकता था। साथ ही कोई दलित वेदों का अध्ययन नहीं कर सकता था। इसी के साथ इस पूरे दौर में ऐसे अनेक मत सामने आए जो खुले तौर पर वेदों का विरोध करते थे। वेद प्रमाण हैं, इस बात को वे नहीं मानते थे ।

वेदों को समझने के लिए छह वेदांगों ध्वनि शास्त्र (शिक्षा), अनुष्ठान (कल्प), व्याकरण, व्युत्पत्ति (निरुक्त), छंद और खगोल शास्त्र (ज्योतिष) का अध्ययन करना चाहिए। इसके अलावा ब्राह्मण ग्रंथ और 18 पुराण–ये सब वैदिक परंपरा में माने जाते हैं। उत्तर वैदिक काल में भारत वर्ष में बौद्ध मत, नाथ संप्रदाय (जिनके नौ नाथ प्रसिद्ध हैं), सिद्ध (84 सिद्ध मान्य हैं), जैन धर्म, कापालिक, शाक्त, योग, सहज साधक आदि आते हैं। ये सब परंपराएँ मध्यकाल में जीवित रही हैं। भक्तिकाल के कवि समर्थन करें या विरोध करें, परंतु ये परंपराएँ उनके चिंतन के केंद्र में बनी रहती हैं। सारे कवि भक्त परमपिता परमेश्वर और स्वर्ग-नरक में विश्वास करते थे। देवता, मंदिर, उपासना, पूजा, तीर्थाटन या इन सबके द्वारा अलौकिक दुनिया में अपने लिए स्थान सुरक्षित करने के साधन थे। सबकी परिधि का अंतिम बिंदु अलौकिक सत्ता में विश्वास था। भक्तों में यह विश्वास कभी डिगता नहीं था।

हिंदी साहित्य के इतिहास के पूर्व मध्यकाल की इन मान्यताओं को उत्तर मध्यकाल में भी चुनौती नहीं दी गई थी, परंतु उनके कर्म का बिंदु बदल गया था। रीतिकाल में शृंगार को प्रमुखता दी जाने लगी। इस काल के कवियों के लिए वेद या धार्मिक ग्रंथ महत्वपूर्ण नहीं रह गए थे। इस काल के कवियों ने शारीरिक आकर्षण और युवावस्था पर सबसे अधिक जोर दिया। संस्कृत का 'अलंकृत काव्य' इन रीतिकालीन शृंगारिक कवियों का आदर्श था। इसका विवेचन करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है, ''अलंकृत काव्य श्रेणी की रचनाओं में कवि को अच्छी शिक्षा की जरूरत होती है। उसे अलंकारों का बहुत अच्छा ज्ञान होना चाहिए, कौन-सी बात ग्राम्य हो जाती है और कौन सी शिष्ट, इस बात की जानकारी होनी चाहिए, उसे रसों और भावों की पहचान होनी चाहिए; अनेक प्रकार की ऋतुओं में प्रेमियों के मानसिक उतार-चढ़ाव की ठीक-ठीक जानकारी होनी चाहिए, व्याकरणसम्मत, किंतु सरस भाषा के नाड़ी-स्पंदन का अनुभव होना चाहिए। प्रेम, मिलन, विरह आदि की विभिन्न स्थितियों को चमत्कारपूर्ण ढंग से कहने की क्षमता होनी चाहिए। प्रेमी और प्रेमिकाओं की विभिन्न अवस्थाओं का सूक्ष्म परिचय होना चाहिए विशिष्ट अवसरों के वस्त्रों-आभूषणों आदि की सही-सही जानकारी होनी चाहिए साथ ही उसके लिए अन्यान्य शास्त्रों की भी यथासंभव अधिक से अधिक जानकारी अपेक्षित है।'' रीतिकाल के कवियों के देवता कामदेव थे। वे पारंपरिक धार्मिक प्रणाली के विरोधी नहीं थे, परंतु उनकी रुचि बदल गई थी। यह भाव परवर्ती संस्कृत काव्य से लेकर भक्तिकाल और रीतिकाल तक अबाध गति से प्रवाहित होता रहा है।

भक्तिकाव्य में मध्ययुगीनता

भक्तिकाव्य में आधुनिक मूल्यों के साथ मध्यकालीन मूल्यों की भी अभिव्यक्ति हुई है। हिंदी आलोचकों ने मध्यकालीन कवियों में कई आधुनिक जीवन मूल्य खोज निकाले हैं। मध्ययुगीनता की दृष्टि से मध्ययुग का सारा साहित्य पारलौकिक जीवन की चिंता से ओतप्रोत है। कबीर आदि निर्गुण संत भी इस जगत को माया ही मानते हैं। सगुण भक्त भी इसे भवसागर ही मानते हैं, जिसे पार करके उस परमपिता परमेश्वर से मिलन संभव है। सारे कवि प्रार्थना करते हैं, पुकारते हैं आर्तनाद करते हैं सभी कवियों में यह आर्त्तनाद गूँजता रहता है।

इस काल का कवि अपने वर्तमान जीवन से असंतुष्ट है और उसमें परिवर्तन करना चाहता है, किंतु उसके पास संपूर्ण समाज के सुधार की कोई योजना नहीं है। उनका कहना था कि हे जीव!

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

तुम अपने आपको सुधार लो। स्वयं ईश्वर मिलन की योजना बना लो। सब लोगों को सामूहिक रूप से ईश्वर मिलन के लिए ले जाना संभव नहीं है। इनमें से जो प्रयास करेगा, वह अपने कर्मों के अनुसार जन्म-मरण के बंधन से मुक्ति प्राप्त कर सकता है। कवि के पास इसके लिए कई पौराणिक संदर्भ हैं। यह विश्वास तुलसीदास, सूरदास, मीरा, दादू और कबीर की कविताओं का प्राणतत्व, जो मध्ययुगीन है।

तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में रामराज्य की परिकल्पना प्रस्तुत की। सब विधि निषेधानुसार जीवन जीते हैं। वर्णाश्रम धर्म का पालन करते हैं। भगवान की भक्ति करते हैं और प्रसन्न रहते हैं अर्थात तुलसीदास भी मध्ययुगीन चिंतकों की तरह इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सर्वोत्तम अतीत में हो चुका है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत

आचार्य रामचंद्र शुक्ल भक्तिकाल की कविता को मुस्लिम अक्रांताओं से पीड़ित जनता की करुण पुकार मानते हैं। उनकी दृष्टि में भी यह प्रतिरोध का काव्य नहीं, अपितु पराजय का काव्य है। यद्यपि हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनके मत का पुरजोर खंडन किया था, लेकिन राजनीतिक परिस्थितियों का यह विश्लेषण मात्र काल्पनिक नहीं था। हिंदी साहित्य इन परिस्थितियों के दबाव में तो था ही।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भक्ति काव्य की रचना के समय भारत पर मुस्लिम आक्रमण प्रारंभ हो चुके थे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार भक्तिकाल का समय संवत् 1375 से 1700 तक था। 712 ई. में पहली बार मोहम्मद बिन कासिम ने सिंध पर विजय प्राप्त की थी। इसके बाद 1192 में मोहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान को पराजित करके भारत में मुस्लिम साम्राज्य को स्थायित्व प्रदान किया। आरंभिक मुस्लिम शासकों का उद्देश्य इस्लाम का प्रचार और लूटपाट था, किंतु बाद में उन्होंने अपना ध्यान भारत पर शासन करने में लगाया। भक्तिकाव्य के समय भारत पर गुलाम वंश का शासन रहा। इस दौरान भारत में राजनीतिक लूटपाट और कत्लेआम आम बात थी। जनता भले ही मूकदर्शक थी। मुगल साम्राज्य की स्थापना से पहले भारतवर्ष राजनीतिक रूप से अस्थिर था। किसी भी कवि ने अपने समय के शासकों पर टिप्पणी नहीं की, परंतु उनकी तटस्थता सत्ता के पक्ष में नहीं थी। सूफी कवियों ने अवश्य अपने जमाने के शासकों की तारीफ की। इस कारण आचार्य रामचंद्र शुक्ल के मत से सहमत हुआ जा सकता है कि इन कवियों के विषय धर्म, दर्शन और पौराणिक कथाएँ ही रहे। तात्कालिक जीवन यथार्थ से उनकी कविता अलग-थलग ही रही।

सगुण मतवाद

भक्तिकाल में सगुण और निर्गुण दोनों पद्धतियाँ प्रचलित थीं, आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने दो प्रकार की भक्ति पद्धति का जिक्र किया है–''भक्तों के भी दो वर्ग थे। सगुण मतवाद परंपरा से परिचालित भक्ति पद्धति के अनुयायी थे। उनका मानना था कि परंपरा को चलाए रखना है। कुछ नया नहीं कहना है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस प्राचीन मत का स्रोत वेद, पुराण, स्मृतियों, उपनिषदों, महाकालों तथा प्राचीन काल के संस्कृत साहित्य में खोजा। हिंदी साहित्य के आरंभ से पहले भारतीय चिंतन का मूल रूप स्थिर हो चुका था। बाद में आने वाले सभी चिंतक और विचारक इनके मतों को ही उदधृत करते हैं या व्याख्या करते हैं या उनको उचित ठहराने के लिए तर्क देते हैं।

निर्गुण मतवाद

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी निर्गुण परंपरा को भी भारतीय परंपरा ही मानते हैं, किंतु यह परंपरा स्मार्त हिंदू मत की विरोधी रही है। बौद्ध धर्म से अनुप्रमाणित यह परंपरा निर्गुण मत को मानती है। निर्गुण कवियों और दार्शनिकों ने प्रचलित पारंपरिक हिंदू धर्म की कुछ बातों का जोरदार खंडन किया। इस खंडन के कारण कुछ लोग इनमें आधुनिकता के दर्शन करते हैं, जो द्विवेदी जी के अनुसार सही नहीं है। यह परंपरा भी मध्ययुगीन है।

निर्गुण कवियों के खंडन की बातें आधुनिक लगने से आधुनिक चिंतक कबीर, दादू आदि निर्गुण संतों को आधुनिक सिद्ध करते हैं। लेकिन वे मंडन क्या करते हैं? वे भी कहते हैं कि यह संसार माया है। कबीर इस संसार के परित्याग का उपदेश देते हैं। वे भी इस मर्त्य जगत को यथावत् छोड़कर परमपिता परमेश्वर की शरण में जाने का उपदेश देते हैं और यह सब बातें मध्ययुगीनता के भीतर ही आती है। कबीर भी वही बातें कहते हैं, जो कबीर के पूर्ववर्ती नाथ और सिद्ध कह चुके हैं। अतः कबीर भी मौलिकता का दावा नहीं करते, न दादू ऐसा दावा करते हैं। निर्गुण और सगुण में, तुलसी और कबीर में बहुत-सी बातों में मतैक्य भी मिलता है, केवल मत भिन्नता ही नहीं है।

निर्गुण मत की दूसरी शाखा प्रेमाश्रयी सूफी शाखा है। शुक्ल जी के अनुसार इनकी गाथाएँ वास्तव में साहित्य-कोटि के भीतर आती हैं। हालांकि इन्होंने कल्पित प्रेम कहानियाँ लिखी हैं। इन साधक कवियों ने लौकिक प्रेम के बहाने उस प्रेमतत्व का आभास दिया है जो प्रियतम ईश्वर से मिलाने वाला है। सूफी काव्य में लोक कथाओं के साथ धार्मिक परंपराओं एवं मतों का रंग भी चढ़ा हुआ है। इस धार्मिकता के कारण ये कहानियां भी अंततः मध्ययुगीन ही मानी जाएंगी।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. मध्ययुगीनता की धारणा को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–जब हम आदि-अंत-मध्य कहते हैं, तो यहाँ मध्य स्थितिबोधक है, जब हम प्राचीन, मध्यकालीन, अधुनातन अथवा आधुनिक कहते हैं तो यहाँ मध्यकालीन, काल की स्थिति का वाचक होता है, लेकिन प्राचीनता, मध्यकालीनता और आधुनिकता जैसे शब्दों के बीच मध्यकालीनता भाववादी संज्ञा के रूप में आता है, जो एक निश्चित कालवाची स्थिति से उभर कर आनेवाली विशेष प्रकार की प्रवृत्ति का द्योतक होता है, यहीं से मध्यकालीनता शब्द का प्रयोग एक अवधारणा की तरह होता है।

मध्यकालीनता एक विशेष प्रकार की मानसिकता का सूचक है, जो किसी भी देश-काल में मध्यकालीनता की कही जाएगी। इसे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी 'जबदी हुई स्तब्ध मनोवृत्ति' के रूप में व्याख्यायित करते हैं। स्तब्ध या कुंठित मनोवृत्ति को वे 'सचेत परिवर्तनेच्छा' का अभाव मानते हैं। सचेत परिवर्तनेच्छा अर्थात् असुंदर या अशोभन परिस्थितियों को सुंदर-शोभन में परिवर्तित कर देने की इच्छा। दूसरे शब्दों में कहें तो हर वह विचार अथवा विचारधारा जो मनुष्य की सचेत परिवर्तनेच्छा की भावना को कुंठित

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

करता है, मध्यकालीनता है, चाहे वह नियतिवाद हो या भाग्यवाद, दोनों ही मध्यकालीन बोध की उपज है, भारतीय मध्यकाल में 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' अथवा 'कर्म प्रधानविस्व करि राखा' जैसे जुमले प्रचलन में तो थे, लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत थी, मध्यकालीनता इसी से संबंधित है। किसी व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक उत्थान के मूल में उस पर की गई कृपा होती थी। सब कुछ स्वामी के कृपा पर निर्भर था, कर्म पर कुछ भी नहीं, महत्त्व मात्र कृपा या प्रसाद का था, पुरुषार्थ का नहीं। इससे परवशता की प्रबल भावना का जन्म लेना अवश्यम्भावी था। कोई भी व्यक्ति अपने लाभ-हानि का कोई बुद्धिसंगत कारण नहीं ढूँढता था। पुरोहित पुनर्जन्म की कल्पना का प्रचार करते थे, जिसके अनुसार इस जन्म में मनुष्य जो कष्ट उठाता है वह उसके पूर्व जन्मों का फल होता है। पुनर्जन्म की कल्पना जातक कथाओं में भी है, किन्तु सामंती दौर में इस कल्पना का प्रचार अविश्रांत रूप से किया जाता रहा। धर्म कथाओं द्वारा इस कल्पना को किसानों के मानस में प्रतिष्ठित किया गया, और पुरोहित तथा महत्तर लोकमानस में प्रतिष्ठित किया गया। पुराहित तथा महत्तर लोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसका प्रचार-प्रसार करते रहे। किसानों और भूस्वामियों को अगले जन्म में नरक भोगने का भय दिखाया जाता था। सामान्य जीवन के छोटे-बड़े लगभग सभी कार्य कर्मकांडी धर्म के इस भय से ही संचालित होता था। इस स्थिति को प्रो. रामशरण शर्मा 'सामंती मानसिकता' के रूप में व्याख्यायित करते हैं, वस्तुत: यही मध्यकालीनता है।

एक तरफ आततायी सामंती वर्ग है, जिसकी मर्जी पर कोई अंकुश नहीं, दूसरी ओर जन सामान्य है जिसकी सामाजिक स्थिति के निर्धारण में पुरूषार्थ और कर्म की कोई भूमिका नहीं है। सब कुछ जन्म व वंश से तय होता है। ऐसे में मनुष्य का भाग्य बहुत कुछ उसके जन्म (वंश) से निर्धारित हो जाता है और अपने जन्म के चुनाव में मनुष्य की कोई भूमिका नहीं होती। दूसरे शब्दों में, मनुष्य अपने भाग्य और परिस्थितियों का निर्माता नहीं होता, बल्कि वह सामाजिक नियमों, प्रथाओं और परिस्थितियों के आगे परवश होता है। यही परवशता नियतिवादी विचार को जन्म देती है। मनुष्य के किए कुछ नहीं हो सकता, सब पूर्व निर्धारित है, जो भाग्य में है वही मिलेगा जैसी मानसिकता का विकास होता है। इस तरह भविष्य भाग्यवाद के सहारे चलता है, नियति और भाग्य के इस लिखे को बदलने के लिए धर्म और कर्मकांडों का ही एक मात्र सहारा बचता है, क्योंकि ईश्वर चाहे तो क्या नहीं हो सकता! अर्थात् परिवर्तन की चाह तो हो (चूँकि यह मनुष्य की आदिम प्रवृत्ति है) लेकिन परिवर्तन में अपनी कर्तृत्व भूमिका को न तय कर पाना बल्कि अपनी परिवर्तनेच्छा को पारलौकिक सत्ता, ईश्वर, भाग्य और कर्मकांडों के हवाले कर देना ही मध्यकालीन-बोध है।

धर्म जो प्रकृति की शक्तियों के सामने मनुष्य की बेबसी से पैदा हुआ था, शास्त्रबद्ध होकर ईश्वर, परलोक, कर्मकांड और भाग्यवाद पर आधारित कुछ बहुत बड़ा तंत्र फैला लेता है। मध्ययुग में मनुष्य की व्यक्तिगत, निजी नैतिक जीवन का नियमन करने की सीमा रेखा से बाहर निकल समाज व्यवस्था को संचालित करने लगा। पुरोहित धर्म के इस तंत्र का अधिकृत रक्षक बना, जिसका घनिष्ठ संबंध सामंत वर्ग से होता था। पुरोहित और सामंत एक-दूसरे के अधीन नहीं थे, बल्कि एक-दूसरे के हितों के पोषक थे। सामंतों के हित में पुरोहित वर्ग समाज में यथास्थिति को बनाये रखने के लिए धर्म की ओट लेकर भाग्यवाद, कर्मफलवाद, नियतिवाद आदि के माध्यम से समाज में व्याप्त विषमता, वर्ग-भेद, ऊँच-नीच की पद-सोपानिकता को न्यायोचित ठहराता था। सामंत पुरोहितों के हितधन-भूमि और बल का सहयोग करता था, दूसरे शब्दों में, सामंत, ब्राह्मण और शास्त्र मध्ययुगीन तंत्र है जो मिलकर उस युग के सामाजिक और मानसिक ढाँचा तय करते थे। मध्यकालीनता इसी संस्कृति की वैचारिक अभिव्यक्ति है। यह विचार पराप्राकृतिक शक्ति में विश्वास करता है, जिसके अनुसार प्रकृति की शक्ति के ऊपर कुछ है तो सबका नियामक है। इसी से जुड़ा रहता है एक अंतिम लक्ष्य, मनुष्य जिसे पाने की आकांक्षा करता है, जिसके लिए वह निरंतर प्रयत्नशील रहता है। इस आधार पर यह विचार वास्तविकता के द्वैत सिद्धांत को स्वीकारता है, जिसमें पदार्थपरक भौतिक सत्ता और आध्यात्मिक जगत् दोनों का सह-अस्तित्व होता है। ये दोनों अलग-अलग होते हैं। और इनके सम्पर्क के बिन्दु सीमित होते हैं, दोनों ही वास्तविक हो सकते हैं, जैसे मनुष्य भौतिक है पर उसकी आत्मा आध्यात्मिक तत्त्व है और दोनों भिन्न हैं। इसी आधार पर भौतिक जीवन का कार्य-व्यापार भले ही नित् परिवर्तनशील हो, पर जीवन का एक आध्यात्मिक अंतिम लक्ष्य निर्धारित हो जाता है।

सत्य को सिर्फ खोजा जा सकता है, तात्विकता का महत्त्व इस हद तक होता है कि कोई कथन आत्यंतिक रूप से या तो सत्य होता है या झूठ, सत्य-असत्य की परिभाषा परिस्थितियों के सापेक्ष नहीं तय की जाती है, दूसरे शब्दों में यह परमवाद की स्वीकृति है। इसका मुख्य कारण यह है कि मध्यकालीनता ज्ञान को अपने अंतिम रूप में निरपेक्ष मानता है, व्यावहारिक जरूरतों से अलग, अर्थात् ज्ञान का स्रोत मूलत: सैद्धांतिक होता है, व्यावहारिक नहीं। आप्त वाक्य या मनुष्य का दिमाग ज्ञान को स्रोत होता है। इसे भी श्रद्धा से प्राप्त किया जाता है। 'श्रद्धावान लभते ज्ञानम्' सम्भवत: इसीलिए कबीर ने गदहे के पीठ पर किताबों के बोझ के रूपक के माध्यम से इस स्थिति पर व्यंग्य किया है।

मध्ययुगीन मानस बड़ी-बड़ी घटनाओं का तटस्थ द्रष्टा होता है। अत: घटनाओं को बदलने में उसकी भूमिका नहीं हो सकती। वह केवल व्याख्या कर सकता है। अकारण नहीं है कि मध्ययुगीन चिंतन टीकाओं के रूप में ही हुआ है। मौलिक चिंतन की परंपरा यहाँ नहीं दिखती है। अज्ञात के प्रति जिज्ञासा का भाव कम होने से नये अनुसंधानों की संभावना खत्म होती गई, ऐसे में मौलिक चिंतन की आधार भूमि कैसे बनती? अत: मध्यकालीन मानस हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में, ''धार्मिक आचारों और स्वत: प्रमाण माने जाने वाले आप्त वाक्यों का अनुयायी होता जाता है और साधारणत: आप्त समझे जाने वाले ग्रंथों की बाल की खाल निकालने वाली व्याख्याओं पर अपनी समस्त बुद्धि खर्च कर देता है।'' मानसिक और बौद्धिक जड़ता की स्थिति यह होती है कि विचारों को दरकिनार कर रूढ़ियों को ही महत्त्व दिया जाता है। द्विवेदीजी ने इसे 'प्रतीक और रूढ़ि का विवेक खोकर कुंठाग्रस्त' हो जाना कहा, उनके अनुसार–प्रत्येक शब्द, प्रत्येक मूर्ति, प्रत्येक रेखा और प्रत्येक चिह्न जब तक अपने पीछे के तत्व चिंतन भुला

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com